Chapter दो

मनु के पुत्रों की वंशावलियाँ

इस दूसरे अध्याय में करूष इत्यादि मनु के पुत्रों के वंशों का वर्णन हुआ है।

जब सुद्युम्न ने वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार कर लिया और वह जंगल के लिए चल दिया तो वैवस्वत मनु ने पुत्रेच्छा से भगवान् की पूजा की। फलस्वरूप महाराज इक्ष्वाकु की ही भाँति उसके दस पुत्र उत्पन्न हुए जो अपने ही पिता के समान थे। इन पुत्रों में से एक, पृषध्र, अपने हाथ में तलवार लेकर रात में गायों की रखवाली किया करता था। अपने गुरु की आज्ञा पालन करते हुए वह समूची रात इसी तरह खड़ा रहता था। एक बार रात्रि के अंधकार में एक बाघ ने गोशाला में जाकर एक गाय पकड़ ली। जब पृषध्र को यह पता चला तो वह अपने हाथ में तलवार लेकर उस बाघ का पीछा करने लगा। दुर्भाग्यवश जब वह बाघ के पास पहुँच गया तो वह अँधेरे के कारण बाघ तथा गाय में अन्तर न देख पाया और इस तरह उसने गाय का वध कर दिया। इस पर उसके गुरु ने शाप दे दिया कि वह शूद्र कुल में जन्म ले, किन्तु उसने योग का अभ्यास किया और भक्तियोग द्वारा भगवान् की पूजा की। तत्पश्चात् वह स्वेच्छा से प्रज्ज्वलित दावाग्नि में प्रविष्ट हो गया और इस तरह अपना भौतिक शरीर त्यागकर भगवद्धाम वापस चला गया।

मनु का सबसे छोटा बेटा कवि अपने बाल्यकाल से ही भगवान् का परम भक्त था। मनु के पुत्र करूष से क्षत्रियों का एक सम्प्रदाय चला जो कारूष कहलाया। मनु के दूसरे पुत्र धृष्ट से क्षत्रियों का एक अन्य सम्प्रदाय चला जो क्षत्रिय-गुणों से युक्त पिता से जन्म लेने के बावजूद भी, बाद में ब्राह्मण हो गये। मनु के अन्य पुत्र नृग से सुमति, भूतज्योति तथा वसु नामक पुत्र तथा पौत्र हुए। वसु से प्रतीक हुआ और उससे ओघवान हुआ। मनु के अन्य पुत्र नरिष्यन्त के वीर्य के वंश में चित्रसेन, ऋक्ष, मीढ़वान्, पूर्ण, इन्द्रसेन, वीतिहोत्र, सत्यश्रवा, उरुश्रवा, देवदत्त तथा अग्निवेश्य उत्पन्न हुए। अग्निवेश्य नामक क्षत्रिय से अग्निवेश्यायन नामक सुविख्यात ब्राह्मण वंश चला। मनु के अन्य पुत्र दिष्ट के वीर्यकुल से नाभाग उत्पन्न हुआ जिसकी परम्परा में भलन्दन, वत्सप्रीति, प्रांशु, प्रमति, खनित्र, चाक्षुष, विविंशति, रम्भ, खनीनेत्र, करन्धम, अवीक्षित, मरुत्त, दम, राज्यवर्धन, सुधृति, नर, केवल, धुन्धुमान, वेगवान, बुध तथा तृणबिन्दु उत्पन्न हुए। इस प्रकार इस गोत्र में अनेक पुत्र तथा पौत्र उत्पन्न हुए। तृणबिन्दु से इलविला नामक कन्या उत्पन्न हुई

जिससे कुवेर ने जन्म लिया। तृणबिन्दु के तीन पुत्र भी हुए जिनके नाम विशाल, शून्यबन्धु तथा धूम्रकेतु थे। विशाल का पुत्र हेमचन्द्र था जिसका पुत्र धूम्राक्ष था और उसका पुत्र संयम हुआ। संयम के पुत्र देवज तथा कृशाश्व हुए। कृशाश्व के पुत्र सोमदत्त ने अश्वमेध यज्ञ किया और भगवान् विष्णु की पूजा करके उसने भगवद्धाम वापस जाकर परम सिद्धि प्राप्त की।

श्रीशुक उवाच
एवं गतेऽथ सुद्युम्ने मनुर्वैवस्वतः सुते ।
पुत्रकामस्तपस्तेपे यमुनायां शतं समाः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एवम्—इस प्रकार; गते—वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार करने के लिए; अथ—तत्पश्चात्; सुद्युम्ने—जब सुद्युम्न; मनुः वैवस्वतः—वैवस्वत मनु जो श्राद्धदेव कहलाते थे; सुते—अपना पुत्र; पुत्र-कामः—पुत्र पाने की इच्छा से; तपः तेपे—कठिन तपस्या की; यमुनायाम्—यमुना नदी के तट पर; शतम् समाः—एक सौ वर्षों तक।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : इसके पश्चात् जब वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव) का पुत्र सुद्युम्न वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करने के लिए जंगल में चला गया तो मनु ने और अधिक सन्तान प्राप्त करने की इच्छा से यमुना नदी के तट पर सौ वर्षों तक कठिन तपस्या की।

ततोऽयजन्मनुर्देवमपत्यार्थं हरिं प्रभुम् ।
इक्ष्वाकुपूर्वजान्पुत्रान्लेभे स्वसदृशान्दश ॥ २ ॥

शब्दार्थ

ततः—तत्पश्चात्; अयजत्—पूजा की; मनुः—वैवस्वत मनु ने; देवम्—भगवान् की; अपत्य-अर्थम्—सन्तान प्राप्त करने के लिए; हरिम्—हरि की; प्रभुम्—प्रभु; इक्ष्वाकु-पूर्व-जान्—जिनमें सबसे बड़ा इक्ष्वाकु था; पुत्रान्—पुत्रों को; लेभे—पाया; स्व-सदृशान्—अपनी ही तरह के; दश—दस।

तब पुत्र-कामना से श्राद्धदेव ने देवों के देव भगवान् हरि की पूजा की। इस तरह उसे अपने ही सदृश दस पुत्र प्राप्त हुए। इनमें से इक्ष्वाकु सबसे बड़ा था।

पृषध्रस्तु मनोः पुत्रो गोपालो गुरुणा कृतः ।
पालयामास गा यत्तो रात्र्यां वीरासनव्रतः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

पृषध्रः तु—उनमें से पृषध्र; मनोः—मनु का; पुत्रः—पुत्र; गो-पालः—गायों को पालने वाला; गुरुणा—अपने गुरु के आदेश से; कृतः—लगाया गया; पालयाम् आस—रक्षा की; गाः—गायों को; यत्तः—इस प्रकार लगाया गया; रात्र्याम्—रात में; वीरासन-व्रतः—वीरासन का व्रत लेकर तलवार लिए खड़ा।

इन पुत्रों में से पृषध्र अपने गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए गायों की रखवाली में लग गया। गायों की रक्षा के लिए वह सारी रात हाथ में तलवार लिए खड़ा रहता।

तात्पर्य : वीरासन कहलाने वाला व्यक्ति हाथ में तलवार लेकर सारी रात खड़ा रहकर गायों की रक्षा करने का व्रत लेता है। चूँकि पृषध्र ने ऐसा व्रत ले रखा था अतएव यह समझा जा सकता है कि उसका कोई कुल नहीं था। इस व्रत से हम यह भी समझ सकते हैं कि गो-रक्षा कितनी अनिवार्य है। क्षत्रिय का कोई न कोई पुत्र गायों को रात्रि में भी खूँख्वार जानवरों से बचाने के लिए यह व्रत लेता था। तो फिर गायों को कसाईघरों में भेजने के विषय में क्या कहा जाय? यह तो मानव समाज का सबसे पापपूर्ण कृत्य है।

एकदा प्राविशद्गोष्ठं शार्दूलो निशि वर्षति ।
शयाना गाव उत्थाय भीतास्ता बभ्रमुर्व्रजे ॥ ४॥

शब्दार्थ

एकदा—एक बार; प्राविशत्—घुस गया; गोष्ठम्—गोशाला में; शार्दूलः—बाघ; निशि—रात्रि में; वर्षति—वर्षा होते समय; शयानाः—लेटी हुईं; गावः—गाएँ; उत्थाय—उठकर; भीताः—डरी हुई; ताः—वे सब; बभ्रमुः—इधर-उधर फैल गईं; व्रजे—गोशाला के चारों ओर की भूमि में।

एक बार रात्रि में, जब वर्षा हो रही थी, एक बाघ गोशाला में घुस आया। उसे देखकर भूमि में लेटी हुई सारी गाएँ डर के मारे खड़ी हो गईं और गोशाला में तितर-बितर हो गईं।

एकां जग्राह बलवान्सा चुक्रोश भयातुरा ।
तस्यास्तु क्रन्दितं श्रुत्वा पृषध्रोऽनुससार ह ॥ ५॥
खड्गमादाय तरसा प्रलीनोडुगणे निशि ।
अजानन्नच्छिनोद्बभ्रोः शिरः शार्दूलशङ्कया ॥ ६॥

शब्दार्थ

एकाम्—एक गाय को; जग्राह—पकड़ लिया; बलवान्—बलशाली बाघ ने; सा—वह गाय; चुक्रोश—चिल्लाने लगी; भय-आतुरा—भयभीत; तस्याः—उसकी; तु—लेकिन; क्रन्दितम्—चीत्कार; श्रुत्वा—सुनकर; पृषध्रः—पृषध्र ने; अनुससार ह—पीछा किया; खड्गम्—तलवार; आदाय—लेकर; तरसा—तेजी से; प्रलीन-उडु-गणे—जब तारे बादलों से ढक गये; निशि—रात में; अजानन्—अनजाने; अच्छिनोत्—काट लिया; बभ्रोः—गाय का; शिरः—सिर; शार्दूल-शङ्कया—बाघ का सिर समझकर।

जब अत्यन्त बलवान बाघ ने एक गाय को पकड़ लिया तो वह भयभीत होकर चिल्लाने लगी। पृषध्र ने यह चीत्कार सुनी और वह तुरन्त इस आवाज का पीछा करने लगा। उसने अपनी तलवार निकाल ली लेकिन चूँकि तारे बादलों से ढके थे अतएव उसने गाय को बाघ समझकर धोखे में अत्यन्त बलपूर्वक गाय का सिर काट लिया।

व्याघ्रोऽपि वृक्णश्रवणो निस्त्रिंशाग्राहतस्ततः ।
निश्चक्राम भृशं भीतो रक्तं पथि समुत्सृजन् ॥ ७॥

शब्दार्थ

व्याघ्रः—बाघ; अपि—भी; वृक्ण-श्रवणः—कान कटा हुआ; निस्त्रिंश-अग्र-आहतः—तलवार की नोंक से कट जाने के कारण; ततः—तत्पश्चात्; निश्चक्राम—(उस स्थान से) भाग निकला; भृशम्—अत्यधिक; भीतः—भयभीत होकर; रक्तम्—रक्त; पथि—रास्ते में; समुत्सृजन्—गिराता हुआ।

चूँकि तलवार की नोक से बाघ का कान कट गया था अतएव वह अत्यधिक भयभीत था और वह उस स्थान से रास्ते भर कान से खून बहाता हुआ भाग खड़ा हुआ।

मन्यमानो हतं व्याघ्रं पृषध्रः परवीरहा ।
अद्राक्षीत्स्वहतां बभ्रुं व्युष्टायां निशि दुःखितः ॥ ८॥

शब्दार्थ

मन्यमानः—यह सोचते हुए कि; हतम्—मार डाला गया; व्याघ्रम्—बाघ को; पृषध्रः—मनु पुत्र पृषध्र; पर-वीर-हा—यद्यपि शत्रु को दण्ड देने में समर्थ था; अद्राक्षीत्—देखा; स्व-हताम्—अपने द्वारा मारी गयी; बभ्रुम्—गाय को; व्युष्टायाम् निशि—रात्रि बीत जाने पर (प्रातःकाल); दुःखितः—अत्यन्त दुखी हुआ।

अपने शत्रु का दमन करने में समर्थ पृषध्र ने प्रातःकाल जब देखा कि उसने गाय का वध कर दिया है, यद्यपि रात में उसने सोचा था कि उसने बाघ को मारा है, तो वह अत्यन्त दुखी हुआ।

तं शशाप कुलाचार्यः कृतागसमकामतः ।
न क्षत्रबन्धुः शूद्रस्त्वं कर्मणा भवितामुना ॥ ९॥

शब्दार्थ

तम्—उसको (पृषध्र को); शशाप—शाप दे दिया; कुल-आचार्यः—कुलगुरु वसिष्ठ ने; कृत-आगसम्—गोवध का महापाप करने के कारण; अकामतः—न चाहते हुए; न—नहीं; क्षत्र-बन्धुः—क्षत्रिय कुटुम्बी; शूद्रः त्वम्—तुमने शूद्रजैसा आचरण किया है; कर्मणा—अतएव अपने कर्मफल से; भविता—तुम शूद्र हो जाओगे; अमुना—गोवध करने से।

यद्यपि पृषध्र ने अनजाने में यह पाप किया था, किन्तु उसके कुलपुरोहित वसिष्ठ ने उसे यह शाप दिया, ''तुम अपने अगले जन्म में क्षत्रिय नहीं बन सकोगे, प्रत्युत गोवध करने के कारण तुम्हें शूद्र बनकर जन्म लेना पड़ेगा।''

तात्पर्य : ऐसा लगता है कि वसिष्ठ तमोगुण से मुक्त नहीं हो पाये थे। पृषध्र के कुलपुरोहित या गुरु होने के नाते उन्हें पृषध्र के अपराध को गम्भीरता से नहीं लेना चाहिए था, किन्तु उल्टे उन्होंने उसे शूद्र बनने का शाप दे दिया। कुलपुरोहित का धर्म शिष्य को शाप देना नहीं अपितु कोई प्रायश्चित्त करवा कर राहत देना

होता है। किन्तु वसिष्ठ ने इसके विपरीत किया। अतएव श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर कहते हैं कि वह दुर्मति था अर्थात् उसकी बुद्धि ठीक नहीं थी।

एवं शप्तस्तु गुरुणा प्रत्यगृह्णात्कृताञ्जलिः ।
अधारयद्व्रतं वीर ऊर्ध्वरेता मुनिप्रियम् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; शप्तः—शापित होकर; तु—लेकिन; गुरुणा—अपने गुरु द्वारा; प्रत्यगृह्णात्—उसने स्वीकार कर लिया; कृत-अञ्जलिः—हाथ जोड़कर; अधारयत्—ग्रहण किया; व्रतम्—ब्रह्मचर्य व्रत; वीरः—उस वीर ने; ऊर्ध्व-रेताः—अपनी इन्द्रियों को वश में करके; मुनि-प्रियम्—मुनियों द्वारा स्वीकृत।

जब उस वीर पृषध्र को उसके गुरु ने इस प्रकार शाप दे दिया तो उसने हाथ जोड़कर वह शाप अंगीकार कर लिया। तत्पश्चात् अपनी इन्द्रियों को वश में करते हुए उसने सभी मुनियों द्वारा सम्मत ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया।

वासुदेवे भगवति सर्वात्मनि परेऽमले ।
एकान्तित्वं गतो भक्त्या सर्वभूतसुहृत्समः ॥ ११ ॥
विमुक्तसङ्गः शान्तात्मा संयताक्षोऽपरिग्रहः ।
यदृच्छयोपपन्नेन कल्पयन्वृत्तिमात्मनः ॥ १२ ॥
आत्मन्यात्मानमाधाय ज्ञानतृप्तः समाहितः ।
विचचार महीमेतां जडान्धबधिराकृतिः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

वासुदेवे—वासुदेव में; भगवति—भगवान्; सर्व-आत्मनि—परमात्मा में; परे—ब्रह्म में; अमले—कल्मषरहित परम पुरुष में; एकान्तित्वम्—अविचल भाव से भक्ति करते हुए; गतः—उस पद पर स्थित होकर; भक्त्या—शुद्ध भक्ति के कारण; सर्व-भूत-सुहृत् समः—भक्त, मित्र तथा समदर्शी होने के कारण; विमुक्त-सङ्गः—भौतिक कल्मष से रहित; शान्त-आत्मा—शान्तिपूर्ण प्रवृत्ति; संयत—आत्मसंयमित; अक्षः—जिसकी दृष्टि; अपरिग्रहः—किसी से दान ग्रहण कियेबिना; यत्-ऋच्छया—भगवान् की कृपा से; उपपन्नेन—शारीरिक आवश्यकताओं के लिए जो भी उपलब्ध था उससे; कल्पयन्—व्यवस्थित करके; वृत्तिम्—शरीर की आवश्यकताएँ; आत्मनः—आत्मा के लाभ हेतु; आत्मनि—मन में; आत्मानम्—परमात्मा को; आधाय—सदैव रखते हुए; ज्ञान-तृप्तः—आध्यात्मिक ज्ञान से तुष्ट; समाहितः—सदैव समाधिमग्न; विचचार—सर्वत्र भ्रमण करने लगा; महीम्—पृथ्वी में; एताम्—इस; जड—मूक; अन्ध—अन्धा; बधिर—बहरा; आकृतिः—के समान।

तत्पश्चात् पृषध्र ने सारे उत्तरदायित्वों से अवकाश ले लिया और शान्तचित्त होकर अपनी समग्र इन्द्रियों को वश में किया। भौतिक परिस्थितियों से अप्रभावित, भगवान् की कृपा से शरीर तथा आत्मा को बनाए रखने के लिए जो भी मिल जाय उसी से संतुष्ट एवं सब पर समभाव रखते हुए, वह कल्मषहीन परमात्मा भगवान् वासुदेव पर ही अपना सारा ध्यान देने लगा। इस प्रकार शुद्ध ज्ञान से

पूर्णत: सन्तुष्ट एवं अपने मन को भगवान् में ही लगाकर उसने भगवान् की शुद्धभक्ति प्राप्त की और सारे विश्व में विचरण करने लगा। उसे भौतिक कार्यकलापों से कोई लगाव न रहा मानो वह बहरा, गूँगा तथा अन्धा हो।

एवं वृत्तो वनं गत्वा दृष्ट्वा दावाग्निमुत्थितम् ।
तेनोपयुक्तकरणो ब्रह्म प्राप परं मुनि: ॥ १४॥

शब्दार्थ

एवम् वृत्त:—ऐसे आश्रम में स्थित होकर; वनम्—वन में; गत्वा—जाकर; दृष्ट्वा—देखकर; दाव-अग्निम्—जंगल की आग को; उत्थितम्—वहाँ विद्यमान; तेन—उस (अग्नि) के द्वारा; उपयुक्त-करण:—जलाकर सभी इन्द्रियों को लगाते हुए; ब्रह्म—अध्यात्म; प्राप—प्राप्त किया; परम्—चरम लक्ष्य; मुनि:—मुनि की भाँति।

इस मनोवृत्ति से पृषध्र महान् सन्त बन गया और जब वह जंगल में प्रविष्ट हुआ और उसने प्रज्ज्वलित जंगल की आग देखी तो उसने उस अग्नि में अपने शरीर को भस्म कर डाला। इस तरह उसे दिव्य आध्यात्मिक जगत की प्राप्ति हुई।

तात्पर्य : *भगवद्गीता* (४.९) में भगवान् कहते हैं—

जन्म कर्म च मे दिव्यम् एवं यो वेत्ति तत्त्वत: ।

त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥

"हे अर्जुन! जो मेरे जन्म तथा कर्म की दिव्य प्रकृति को जानता है वह इस शरीर को त्यागने पर इस भौतिक जगत में पुन: जन्म न लेकर मेरे नित्य धाम को प्राप्त होता है।" पृषध्र को अपने कर्म के कारण अगले जन्म में शूद्र होने का शाप मिला था, किन्तु उसने सन्त जीवन स्वीकार करके भगवान् में अपने मन को केन्द्रित किया जिससे वह शुद्ध भक्त बन गया। जब उसने अग्नि में अपना शरीर त्याग दिया तो वह भक्ति के कारण तुरन्त ही वैकुण्ठधाम जा पहुँचा जैसा कि *भगवद्गीता* में वर्णित है (*मामेति*)। भगवान् का चिन्तन करते हुए जो भक्ति की जाती है वह इतनी शक्तिशाली होती है कि पृषध्र तक, जिसे शूद्र बनने का शाप मिला था, शूद्र बनने के घोर परिणाम से बच गया और भगवद्धाम को वापस गया। जैसा कि *ब्रह्म-संहिता* (५.५४) में कहा गया है—

यस्त्विन्द्रगोपमथवेन्द्रम् अहो स्वकर्म-

बन्धानुरूपफलभाजनमातनोति ।

कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्तिभाजां

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

जो लोग भक्ति में लग जाते हैं उन्हें उनके भौतिक कर्मों के फल प्रभावित नहीं करते। अन्यथा क्षुद्र कीट से लेकर स्वर्ग के राजा इन्द्र तक प्रत्येक प्राणी कर्म के नियमों के अधीन है, किन्तु सदैव भगवान् की सेवा में संलग्न रहने के कारण शुद्ध भक्त इन नियमों से मुक्त रहता है।

कविः कनीयान्विषयेषु निःस्पृहो
विसृज्य राज्यं सह बन्धुभिर्वनम् ।
निवेश्य चित्ते पुरुषं स्वरोचिषं
विवेश कैशोरवयाः परं गतः ॥ १५॥

शब्दार्थ

कविः—दूसरा पुत्र कवि; कनीयान्—जो सबसे छोटा था; विषयेषु—भौतिक भोगों में; निःस्पृहः—आसक्तिरहित; विसृज्य—छोड़कर; राज्यम्—अपने पिता की सम्पत्ति (राज्य) को; सह बन्धुभिः—अपने मित्रों सहित; वनम्—जंगल में; निवेश्य—सदैव रखकर; चित्ते—हृदय में; पुरुषम्—परम पुरुष को; स्व-रोचिषम्—आत्म-तेजस्वी; विवेश—प्रविष्ट हो गया; कैशोर-वयाः—किशोरावस्था में; परम्—दिव्य जगत; गतः—प्रविष्ट हुआ।

मनु के सबसे छोटे पुत्र कवि ने भौतिक भोगों को अस्वीकार करते हुए युवावस्था में पहुँचने के पूर्व ही राजपाट त्याग दिया। वह अपने हृदय में आत्म-तेजस्वी भगवान् का सदैव चिन्तन करते हुए अपने मित्रों सहित जंगल में चला गया। इस प्रकार उसने सिद्धि प्राप्त की।

करूषान्मानवादासन्कारूषाः क्षत्रजातयः ।
उत्तरापथगोप्तारो ब्रह्मण्या धर्मवत्सलाः ॥ १६॥

शब्दार्थ

करूषात्—करूष से; मानवात्—मनु के पुत्र; आसन्—था; कारूषाः—कारूष कहलाने वाले; क्षत्र-जातयः—क्षत्रियों का समूह; उत्तरा—उत्तरी; पथ—दिशा की ओर; गोप्तारः—राजा; ब्रह्मण्याः—ब्राह्मण संस्कृति के विख्यात रक्षक; धर्म-वत्सलाः—अत्यन्त धार्मिक।

मनु के अन्य पुत्र करूष से कारूष वंश चला जो एक क्षत्रिय कुल था। कारूष क्षत्रिय उत्तरी दिशा के राजा थे। वे ब्राह्मण संस्कृति के विख्यात रक्षक थे और सभी अत्यन्त धार्मिक थे।

धृष्टाद्धार्ष्टमभूत्क्षत्रं ब्रह्मभूयं गतं क्षितौ ।
नृगस्य वंशः सुमतिर्भूतज्योतिस्ततो वसुः ॥ १७॥

शब्दार्थ

धृष्टात्—मनु के दूसरे पुत्र धृष्ट से; धार्ष्टम्—धार्ष्ट नामक जाति; अभूत्—उत्पन्न हुई; क्षत्रम्—क्षत्रिय समूह से सम्बन्धित; ब्रह्म-भूयम्—ब्राह्मणों का पद; गतम्—प्राप्त किया था; क्षितौ—पृथ्वी पर; नृगस्य—मनु के अन्य पुत्र नृग का; वंशः—वंश; सुमतिः—सुमति का; भूतज्योतिः—भूतज्योति का; ततः—तत्पश्चात्; वसुः—वसु नाम से।

मनु पुत्र धृष्ट से धार्ष्ट नामक क्षत्रिय जाति निकली जिसके सदस्यों ने इस जगत में ब्राह्मणों का पद प्राप्त किया। तत्पश्चात् मनु के पुत्र नृग से सुमति और सुमति से भूतज्योति और भूतज्योति से वसु उत्पन्न हुए।

तात्पर्य : यहाँ पर कहा गया है—*क्षत्रं ब्रह्मभूयं गतं क्षितौ*—यद्यपि धार्ष्टगण क्षत्रिय जाति के थे, किन्तु वे ब्राह्मण बनने में समर्थ हो गये थे। इससे नारद मुनि के निम्नलिखित कथन (*भागवत* ७.११.३५) की स्पष्ट पुष्टि होती है—

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम्।

यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत्॥

यदि एक समूह के लोगों के गुण दूसरे समूह के लोगों में पाये जायँ तो उन्हें उनके लक्षणों के आधार पर मान्यता दी जानी चाहिए न कि उस जाति के आधार पर जिसमें वे उत्पन्न हुए हों। जन्म तनिक भी महत्त्वपूर्ण नहीं होता। सारे वैदिक वाङ्मय में मनुष्य के गुणों पर बल दिया गया है।

वसोः प्रतीकस्तत्पुत्र ओघवानोघवत्पिता ।
कन्या चौघवती नाम सुदर्शन उवाह ताम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

वसोः—वसु का; प्रतीकः—प्रतीक नामक; तत्-पुत्रः—उसका पुत्र; ओघवान्—ओघवान; ओघवत्-पिता—जो ओघवान का पिता था; कन्या—उसकी कन्या; च—भी; ओघवती—ओघवती; नाम—नामक; सुदर्शनः—सुदर्शन ने; उवाह—व्याह किया; ताम्—उस कन्या (ओघवती) से।

वसु का पुत्र प्रतीक था और प्रतीक का पुत्र ओघवान हुआ। ओघवान का पुत्र भी ओघवान कहलाया और उसकी पुत्री का नाम ओघवती था। इसका व्याह सुदर्शन के साथ हुआ।

चित्रसेनो नरिष्यन्ताद्दक्षस्तस्य सुतोऽभवत् ।
तस्य मीढ्वांस्ततः पूर्ण इन्द्रसेनस्तु तत्सुतः ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

चित्रसेनः—चित्रसेन; नरिष्यन्तात्—मनु के अन्य पुत्र नरिष्यन्त से; ऋक्षः—ऋक्ष; तस्य—चित्रसेन का; सुतः—पुत्र; अभवत्—हुआ; तस्य—ऋक्ष का; मीढ्वान्—मीढ्वान; ततः—उससे (मीढ्वान से); पूर्णः—पूर्ण; इन्द्रसेनः—इन्द्रसेन; तु—लेकिन; तत्-सुतः—उसका (पूर्ण का) पुत्र।

नरिष्यन्त का पुत्र चित्रसेन हुआ और उसका पुत्र ऋक्ष हुआ। ऋक्ष से मीढ्वान, मीढ्वान से पूर्ण और पूर्ण से इन्द्रसेन हुआ।

वीतिहोत्रस्त्विन्द्रसेनात्तस्य सत्यश्रवा अभूत् ।
उरुश्रवाः सुतस्तस्य देवदत्तस्ततोऽभवत् ॥ २० ॥

शब्दार्थ

वीतिहोत्रः—वीतिहोत्र; तु—लेकिन; इन्द्रसेनात्—इन्द्रसेन से; तस्य—वीतिहोत्र का; सत्यश्रवाः—सत्यश्रवा; अभूत्—हुआ; उरुश्रवाः—उरुश्रवा; सुतः—पुत्र; तस्य—उसका (सत्यश्रवा का); देवदत्तः—देवदत्त; ततः—उरुश्रवा से; अभवत्—हुआ।

इन्द्रसेन से वीतिहोत्र, वीतिहोत्र से सत्यश्रवा, फिर उससे उरुश्रवा और उरुश्रवा से देवदत्त हुआ।

ततोऽग्निवेश्यो भगवानग्निः स्वयमभूत्सुतः ।
कानीन इति विख्यातो जातूकर्ण्यो महानृषिः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

ततः—देवदत्त से; अग्निवेश्यः—अग्निवेश्य; भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली; अग्निः—अग्निदेव; स्वयम्—साक्षात्; अभूत्—हुआ; सुतः—पुत्र; कानीनः—कानीन; इति—इस प्रकार; विख्यातः—सुप्रसिद्ध था; जातूकर्ण्यः—जातूकर्ण्य; महान् ऋषिः—परम सन्त पुरुष।

देवदत्त का पुत्र अग्निवेश्य हुआ जो साक्षात् अग्निदेव था। यह पुत्र विख्यात सन्त था और कानीन तथा जातूकर्ण्य के नाम से विख्यात हुआ।

ततो ब्रह्मकुलं जातमाग्निवेश्यायनं नृप ।
नरिष्यन्तान्वयः प्रोक्तो दिष्टवंशमतः शृणु ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

ततः—अग्निवेश्य से; ब्रह्म-कुलम्—ब्राह्मणों का कुल; जातम्—उत्पन्न हुआ; आग्निवेश्यायनम्—आग्निवेश्यायन; नृप—हे राजा परीक्षित; नरिष्यन्त—नरिष्यन्त का; अन्वयः—वंशज; प्रोक्तः—कहा जा चुका है; दिष्ट-वंशम्—दिष्ट का वंश; अतः—इसके आगे; शृणु—सुनो।

हे राजा, अग्निवेश्य से आग्निवेश्यायन नामक ब्राह्मण कुल उत्पन्न हुआ। चूँकि मैं नरिष्यन्त के वंशजों का वर्णन कर चुका हूँ अतएव अब दिष्ट के वंशजों का वर्णन करूँगा। कृपया मुझसे सुनें।

नाभागो दिष्टपुत्रोऽन्यः कर्मणा वैश्यतां गतः ।

भलन्दनः सुतस्तस्य वत्सप्रीतिर्भलन्दनात् ॥ २३॥
वत्सप्रीतेः सुतः प्रांशुस्तत्सुतं प्रमतिं विदुः ।
खनित्रः प्रमतेस्तस्माच्चाक्षुषोऽथ विविंशतिः ॥ २४॥

शब्दार्थ

नाभागः—नाभाग; दिष्ट-पुत्रः—दिष्ट का पुत्र; अन्यः—दूसरा; कर्मणा—वृत्ति से; वैश्यताम्—वैश्य-आश्रम; गतः—प्राप्त किया; भलन्दनः—भलन्दन; सुतः—पुत्र; तस्य—उसका (नाभाग का); वत्सप्रीतिः—वत्सप्रीति; भलन्दनात्—भलन्दन से; वत्सप्रीतेः—वत्सप्रीति से; सुतः—पुत्र; प्रांशुः—प्रांशु; तत्-सुतम्—उसका (प्रांशु का) पुत्र; प्रमतिम्—प्रमति; विदुः—जानो; खनित्रः—खनित्र; प्रमतेः—प्रमतिसे; तस्मात्—खनित्र से; चाक्षुषः—चाक्षुष; अथ—इस प्रकार (चाक्षुष से); विविंशतिः—विविंशति।

दिष्ट का पुत्र नाभाग हुआ। यह नाभाग जो आगे वर्णित होने वाले नाभाग से भिन्न था, वृत्ति से वैश्य बन गया। नाभाग का पुत्र भलन्दन हुआ, भलन्दन का पुत्र वत्सप्रीति हुआ और उसका पुत्र प्रांशु था। प्रांशु का पुत्र प्रमति था, प्रमति का पुत्र खनित्र और खनित्र का पुत्र चाक्षुष था जिसका पुत्र विविंशति हुआ।

तात्पर्य : मनु का एक पुत्र ब्राह्मण, दूसरा क्षत्रिय और तीसरा वैश्य बना। इससे नारद मुनि के इस कथन की पुष्टि होती है—*यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यंजकम्* (*भागवत* ७.११.३५)। यह कभी नहीं मानना चाहिए कि ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य जन्मजात हैं। ब्राह्मण क्षत्रिय बन सकता है और क्षत्रिय ब्राह्मण। इसी प्रकार ब्राह्मण या क्षत्रिय वैश्य बन सकता है और वैश्य ब्राह्मण या क्षत्रिय में बदल सकता है। इसकी पुष्टि *भगवद्गीता* में हुई है (*चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः*)। अतएव कोई जन्म से ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य नहीं बनता अपितु गुण से बनता है। चूँकि ब्राह्मणों की नितान्त आवश्यकता है अतएव हम कृष्णभावनामृत आन्दोलन में कुछ ब्राह्मणों को मानव समाज का मार्गदर्शन कराने के लिए प्रशिक्षित करने का प्रयास कर रहे हैं। चूँकि इस समय ब्राह्मणों की कमी है इसलिए मानव समाज का मस्तिष्क नष्ट हो चुका है। चूँकि व्यावहारिक रूप में प्रत्येक व्यक्ति शूद्र है अतएव इस समय समाज को सही पथ का मार्गदर्शन कराने वाला कोई नहीं है जिससे जीवन की सिद्धि प्राप्त की जा सके।

विविंशतेः सुतो रम्भः खनीनेत्रोऽस्य धार्मिकः ।
करन्धमो महाराज तस्यासीदात्मजो नृप ॥ २५॥

शब्दार्थ

विविंशतेः—विविंशति से; सुतः—पुत्र; रम्भः—रम्भ; खनीनेत्रः—खनीनेत्र; अस्य—रम्भ का; धार्मिकः—अत्यन्त धार्मिक; करन्धमः—करन्धम; महाराज—हे राजा; तस्य—उसके (खनीनेत्र से); आसीत्—था; आत्मजः—पुत्र; नृप—हे राजा।

विविंशति के पुत्र का नाम रम्भ था जिसका पुत्र अत्यन्त महान् एवं धार्मिक राजा खनीनेत्र हुआ।

हे राजा, खनीनेत्र का पुत्र राजा करन्धम हुआ।

तस्यावीक्षित्सुतो यस्य मरुत्तश्चक्रवर्त्यभूत् ।
संवर्तोऽयाजयद्यं वै महायोग्यङ्गिरःसुतः ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसके (करन्धम के); अवीक्षित्—अवीक्षित; सुतः—पुत्र; यस्य—जिसका (अवीक्षित का); मरुत्तः—मरुत्त नामक (पुत्र); चक्रवर्ती—राजा; अभूत्—हुआ; संवर्तः—संवर्त; अयाजयत्—यज्ञ कराने के लिए रखा; यम्—जिसको (मरुत्त को); वै—निस्सन्देह; महा-योगी—महान् योगी; अङ्गिरः-सुतः—अंगिरा का पुत्र।

करन्धम से अवीक्षित नामक पुत्र हुआ जिसका पुत्र मरुत्त था जो सम्राट था। महान् योगी अंगिरा-पुत्र संवर्त ने यज्ञ सम्पन्न कराने के लिए मरुत्त को लगाया।

मरुत्तस्य यथा यज्ञो न तथान्योऽस्ति कश्चन ।
सर्वं हिरण्मयं त्वासीद्यत्किञ्चिच्चास्य शोभनम् ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

मरुत्तस्य—मरुत्त का; यथा—जिस प्रकार; यज्ञः—यज्ञ; न—नहीं; तथा—उस प्रकार; अन्यः—कोई दूसरा; अस्ति—है; कश्चन—कोई भी; सर्वम्—सभी वस्तुएँ; हिरण्-मयम्—सोने की बनी; तु—निस्सन्देह; आसीत्—था; यत् किञ्चित्—जो भी उसके पास था; च—तथा; अस्य—मरुत्त का; शोभनम्—अत्यन्त सुन्दर।

राजा मरुत्त के यज्ञ का साज-सामान अत्यन्त सुन्दर था क्योंकि सारी वस्तुएँ सोने की बनी थीं। निस्सन्देह, उसके यज्ञ की तुलना किसी भी और यज्ञ से नहीं की जा सकती।

अमाद्यदिन्द्रः सोमेन दक्षिणाभिर्द्विजातयः ।
मरुतः परिवेष्टारो विश्वेदेवाः सभासदः ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

अमाद्यत्—मदान्ध हो गया; इन्द्रः—इन्द्र; सोमेन—सोमरस का पान करके; दक्षिणाभिः—पर्याप्त दक्षिणा प्राप्त करके; द्विजातयः—ब्राह्मण वर्ग; मरुतः—मरुतों ने; परिवेष्टारः—भोज्य पदार्थ परोसा; विश्वेदेवाः—विश्वेदेवा; सभा-सदः—सभा के सदस्य।

उस यज्ञ में सोमरस की बहुत अधिक मात्रा पीने से राजा इन्द्र मदान्ध हो गया। ब्राह्मणों को प्रचुर दक्षिणा मिली जिससे वे सन्तुष्ट थे। उस यज्ञ में मरुतों के विविध देवताओं ने खाना परोसा और विश्वेदेव सभा के सदस्य थे।

तात्पर्य : मरुत्त द्वारा सम्पन्न यज्ञ से सभी लोग विशेष रूप से ब्राह्मण तथा क्षत्रिय प्रसन्न थे। ब्राह्मण पुरोहितों के रूप में दक्षिणा पाने में रुचि रखते हैं और क्षत्रिय मद्यपान करने में। अतएव सभी लोग अपने-

अपने प्राप्तव्यों से सन्तुष्ट थे।

मरुत्तस्य दमः पुत्रस्तस्यासीद्राज्यवर्धनः ।
सुधृतिस्तत्सुतो जज्ञे सौधृतेयो नरः सुतः ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

मरुत्तस्य—मरुत्त का; दमः—दम; पुत्रः—पुत्र; तस्य—दम का; आसीत्—था; राज्य-वर्धनः—राज्यवर्धन अर्थात् राज्य को बढ़ाने वाला; सुधृतिः—सुधृति; तत्-सुतः—उसका पुत्र; जज्ञे—उत्पन्न हुआ; सौधृतेयः—सुधृति से; नरः—नर नामक; सुतः—पुत्र।

मरुत्त का पुत्र दम हुआ, दम का पुत्र राज्यवर्धन था और उसका पुत्र सुधृति और सुधृति का पुत्र नर था।

तत्सुतः केवलस्तस्माद्धुन्धुमान्वेगवांस्ततः ।
बुधस्तस्याभवद्यस्य तृणबिन्दुर्महीपतिः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

तत्-सुतः—उसका (नर का) पुत्र; केवलः—केवल था; तस्मात्—उससे; धुन्धुमान्—धुन्धुमान नामक पुत्र उत्पन्न हुआ; वेगवान्—वेगवान्; ततः—उससे; बुधः—बुध; तस्य—उसके; अभवत्—था; यस्य—जिसका (बुध का); तृणबिन्दुः—तृणबिन्दु; महीपतिः—राजा।

नर का पुत्र केवल हुआ और उसका पुत्र धुन्धुमान था, जिसका पुत्र वेगवान हुआ। वेगवान का पुत्र बुध था और बुध का पुत्र तृणबिन्दु था जो इस पृथ्वी का राजा बना।

तं भेजेऽलम्बुषा देवी भजनीयगुणालयम् ।
वराप्सरा यतः पुत्राः कन्या चेलविलाभवत् ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको (तृणबिन्दु को); भेजे—पति रूप में स्वीकार किया; अलम्बुषा—अलम्बुषा; देवी—देवी; भजनीय—स्वीकार करने योग्य; गुण-आलयम्—सद्गुणों का आगार; वर-अप्सराः—अप्सराओं में सर्वश्रेष्ठ; यतः—जिससे (तृणबिन्दु से); पुत्राः—कुछ पुत्र; कन्या—एक पुत्री; च—तथा; इलविला—इलविला नामक; अभवत्—उत्पन्न हुई।

अप्सराओं में सर्वश्रेष्ठ अत्यन्त गुणी कन्या अलम्बुषा ने अपने ही समान योग्य तृणबिन्दु को पति-रूप में स्वीकार किया। उसके कुछ पुत्र तथा इलविला नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई।

यस्यामुत्पादयामास विश्रवा धनदं सुतम् ।
प्रादाय विद्यां परमामृषिर्योगेश्वरः पितुः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

यस्याम्—जिसमें (इलविला) में; उत्पादयाम् आस—जन्म दिया; विश्रवाः—विश्रवा; धन-दम्—कुवेर अर्थात् धन देने वाला; सुतम्—पुत्र को; प्रादाय—प्राप्त करके; विद्याम्—विद्या को; परमाम्—परम; ऋषिः—महान् संत पुरुष; योग-ईश्वरः—योग के स्वामी; पितुः—अपने पिता से।

महान् सन्त योगेश्वर विश्रवा ने अपने पिता से परम विद्या प्राप्त करके इलविला के गर्भ से परम विख्यात पुत्र धन देने वाले कुवेर को उत्पन्न किया।

विशालः शून्यबन्धुश्च धूम्रकेतुश्च तत्सुताः ।
विशालो वंशकृद्राजा वैशालीं निर्ममे पुरीम् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

विशालः—विशाल; शून्यबन्धुः—शून्यबन्धु; च—भी; धूम्रकेतुः—धूम्रकेतु; च—भी; तत्-सुताः—तृणबिन्दु के पुत्र; विशालः—तीनों में राजा विशाल ने; वंश-कृत्—वंश बनाया; राजा—राजा; वैशालीम्—वैशाली नामक; निर्ममे—निर्माण किया; पुरीम्—महल।

तृणबिन्दु के तीन पुत्र थे—विशाल, शून्यबन्धु तथा धूम्रकेतु। इन तीनों में विशाल ने एक वंश चलाया और वैशाली नामक एक महल की रचना कराई।

हेमचन्द्रः सुतस्तस्य धूम्राक्षस्तस्य चात्मजः ।
तत्पुत्रात्संयमादासीत्कृशाश्वः सहदेवजः ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

हेमचन्द्रः—हेमचन्द्र नामक; सुतः—पुत्र; तस्य—उसका (विशाल का); धूम्राक्षः—धूम्राक्ष; तस्य—उसका (हेमचन्द्र का); च—भी; आत्मजः—पुत्र; तत्-पुत्रात्—उसके पुत्र (धूम्राक्ष) से; संयमात्—संयम से; आसीत्—था; कृशाश्वः—कृशाश्व; सह—सहित; देवजः—देवज।

विशाल का पुत्र हेमचन्द्र कहलाया और उसका पुत्र धूम्राक्ष हुआ जिसका पुत्र संयम था और उसके पुत्रों के नाम देवज तथा कृशाश्व थे।

कृशाश्वात्सोमदत्तोऽभूद्योऽश्वमेधैरिडस्पतिम् ।
इष्ट्वा पुरुषमापाछ्यां गतिं योगेश्वराश्रिताम् ॥ ३५ ॥
सौमदत्तिस्तु सुमतिस्तत्पुत्रो जनमेजयः ।
एते वैशालभूपालास्तृणबिन्दोर्यशोधराः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

कृशाश्वात्—कृशाश्व से; सोमदत्तः—सोमदत्त नामक पुत्र; अभूत्—था; यः—जो (सोमदत्त); अश्वमेधैः—अश्वमेध यज्ञ करके; इडस्पतिम्—भगवान् विष्णु को; इष्ट्वा—पूजकर; पुरुषम्—विष्णु को; आप—प्राप्त किया; अछ्याम्—सर्वश्रेष्ठ; गतिम्—गन्तव्य, गति; योगेश्वर-आश्रिताम्—महान् योगियों द्वारा प्राप्त स्थान; सौमदत्तिः—सोमदत्त का पुत्र; तु—लेकिन; सुमतिः—सुमति; तत्-पुत्रः—उसका (सुमति का) पुत्र; जनमेजयः—जनमेजय; एते—इन सबों ने; वैशाल-भूपालाः—वैशाल वंश के राजा; तृणबिन्दोः यशः-धराः—तृणबिन्दु के यश को बनाये रखा।

कृशाश्व का पुत्र सोमदत्त हुआ जिसने अश्वमेध यज्ञ किए और इस प्रकार भगवान् विष्णु को

प्रसन्न किया। भगवान् की पूजा करने से उसे ऐसा उच्चपद प्राप्त हुआ जो बड़े-बड़े योगियों को मिलता है। सोमदत्त का पुत्र सुमति था जिसका पुत्र जनमेजय हुआ। विशाल वंश में प्रकट होकर इन सारे राजाओं ने राजा तृणबिन्दु के विख्यात पद को बनाये रखा।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कंध के अन्तर्गत ''मनु के पुत्रों की वंशावलियाँ'' नामक द्वितीय अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।